छिपाए रहता है।) अब उठकर सवाल शुरू कीजिए। उठिए, खाना मिलेगा।

(मोहन उठता है। माँ ठगी-सी देखती है। दूसरी ओर से पिता और दीनानाथ दवा लेकर प्रवेश करते हैं।)

माँ : क्यों रे मोहन, तेरे पेट में तो बहुत बड़ी दाढ़ी है। हमारी तो जान निकल गई। पंद्रह-बीस रुपए खर्च हुए, सो अलग। (पिता से) देखा जी आपने।

पिता : (चकित होकर) क्या-क्या हुआ?

माँ : क्या-क्या होता! यह 'ऐसे-ऐसे' पेट का दर्द नहीं है, स्कूल का काम न करने का डर है।

पिता : हें!

(दवा की शीशी हाथ से छूटकर फर्श पर गिर पड़ती है। एक क्षण सब ठगे-से मोहन को देखते हैं। फिर हँस पड़ते हैं।)

दीनानाथ: वाह, मोहन, वाह!

पिता : वाह, बेटा, वाह! तुमने तो खूब छकाया!

(एक अट्टहास के बाद परदा गिर जाता है।)

– विष्णु प्रभाकर

© BSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

शब्दार्थ

एकाएक-अचानक **प्रकोप**-अत्यधिक क्रोध **गंभीर**-गहरा, जटिल, चिंताजनक
बदहज़मी-अनपच **अट्टहास**-जोर की हँसी, ठहाका

प्रश्न-अभ्यास

पाठ से

1. माँ मोहन के 'ऐसे-ऐसे' कहने पर क्यों घबरा रही थी?
2. ऐसे कौन-कौन से बहाने होते हैं जिन्हें मास्टर जी एक ही बार में सुनकर समझ जाते हैं? ऐसे कुछ बहानों के बारे में लिखें।

पाठ से आगे

1. स्कूल के काम से बचने के लिए मोहन ने कई बार पेट में 'ऐसे-ऐसे' होने के बहाने बनाया। मान लो, एक बार उसे सचमुच पेट में दर्द हो जाए और उसकी बातों पर लोगों ने विश्वास नहीं किया, तब मोहन पर क्या बितेगी?
2. पाठ में आए वाक्य-'लोचा-लोचा फिरे है' के बदले 'ढीला-ढाला हो गया है या बहुत कमज़ोर हो गया है'- लिखा जा सकता है। लेकिन, लेखक ने संवाद में विशेषता लाने के लिए बोलियों के रंग-ढंग का उपयोग किया है। इस पाठ में इस तरह की अन्य पंक्तियाँ भी हैं, जैसे-

   -इत्ती नयी-नयी बीमारियाँ निकली हैं,

   -राम मारी बीमारियों ने तंग कर दिया,

   -तेरे पेट में तो बहुत बड़ी दाढ़ी है।

   अनुमान लगाइए, इन पंक्तियों को दूसरे ढंग से कैसे लिखा जा सकता है?
3. मान लीजिए कि आप मोहन की तबीयत पूछने जाते हैं। आप अपने और मोहन के बीच की बातचीत को संवाद के रूप में लिखिए।
4. अगर मोहन शिक्षक के सवाल का जवाब 'हाँ' में देता तो इस एकांकी का अन्त क्या होता?

गतिविधि

1. संकट के समय के लिए कौन-कौन से नंबर याद रखे जाने चाहिए? ऐसे वक्त में पुलिस, फायर ब्रिगेड और डॉक्टर से आप कैसे बात करेंगे? कक्षा में करके बताइए।

© BSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

16 बूढ़ी पृथ्वी का दुख

क्या तुमने कभी सुना है
सपनों में चमकती कुल्हाड़ियों के भय से
पेड़ों की चीत्कार?

कुल्हाड़ियों के वार सहते
किसी पेड़ की हिलती टहनियों में
दिखाई पड़े हैं तुम्हें
बचाव के लिए पुकारते हजारों-हजार हाथ?

क्या होती है, तुम्हारे भीतर धमस
कटकर गिरता है जब कोई पेड़ धरती पर?

सुना है कभी
रात के सन्नाटे में अँधेरे से मुँह ढाँप
किस कदर रोती हैं नदियाँ?

इस घाट अपने कपड़े और मवेशियाँ धोते
सोचा है कभी कि उस घाट
पी रहा होगा कोई प्यासा पानी
या कोई स्त्री चढ़ा रही होगी किसी देवता को अर्घ्य?

कभी महसूस किया कि किस कदर दहलता है
मौन समाधि लिये बैठा पहाड़ का सीना
विस्फोट से टूटकर जब छिटकता दूर तक कोई पत्थर?
सुनाई पड़ी है कभी भरी दुपहरिया में
हथौड़ों की चोट से टूटकर बिखरते पत्थरों की चीख?

© BSTBPC
WEBCOPY: NOT TO BE PUBLISHED

खून की उल्टियाँ करते
देखा है कभी हवा को, अपने घर के पिछवाड़े?

थोड़ा-सा वक्त चुराकर बतियाया है कभी
कभी शिकायत न करनेवाली
गुमसुम बूढ़ी पृथ्वी से उसका दुख?

अगर नहीं, तो क्षमा करना!
मुझे तुम्हारे आदमी होने पर सन्देह है!!

-निर्मला पुतुल

शब्दार्थ

महसूस- अनुभव **चीत्कार**-चीख-पुकार, चिल्लाहट **वार**-प्रहार **धमस**-थकान **समाधि**-तपस्या

प्रश्न-अभ्यास

© BSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

पाठ से

1. निम्नलिखित पंक्तियों के अर्थ स्पष्ट कीजिए-

(क) इस घाट अपने कपड़े और मवेशियाँ धोते
सोचा है कभी कि उस घाट
पी रहा होगा कोई प्यासा पानी
या कोई स्त्री चढ़ा रही होगी। किसी देवता को अर्घ्य?

(ख) अगर नहीं तो क्षमा करना!
मुझे तुम्हारे आदमी होने पर संदेह है!!

2. नदियों के रोने से क्या तात्पर्य है?

पाठ से आगे

1. पृथ्वी को बूढ़ी क्यों कहा गया है?
2. पेड़ का कटकर गिरना एवं पेड़ का टूटकर गिरना में क्या अंतर है?
3. पृथ्वी को प्रदूषण से बचाने हेतु आप क्या कर सकते हैं?

17 सोना

सोना की आज अचानक स्मृति हो आने का कारण है। मेरे परिचित स्वर्गीय डॉ० धीरेन्द्रनाथ वसु की पौत्री सुस्मिता ने लिखा है, ''गत वर्ष अपने पड़ोसी से मुझे एक हिरन मिला था। बीते कुछ महीनों में हम उससे बहुत स्नेह करने लगे हैं, परंतु अब मैं अनुभव करती हूँ कि सघन जंगल से संबद्ध रहने के कारण तथा अब बड़े हो जाने के कारण उसे घूमने के लिए अधिक विस्तृत स्थान चाहिए। क्या कृपा करके आप उसे स्वीकार करेंगी? सचमुच मैं आपकी बहुत आभारी रहूँगी, क्योंकि आप जानती हैं, मैं उसे ऐसे व्यक्ति को नहीं देना चाहती, जो उससे बुरा व्यवहार करे। मेरा विश्वास है, आपके यहाँ उसकी भली-भाँति देखभाल हो सकेगी।''

कई वर्ष पूर्व मैंने निश्चय किया था कि अब हिरन नहीं पालूँगी, परंतु आज उस नियम को भंग किए बिना इस कोमल प्राण जीव की रक्षा संभव नहीं है।

सोना भी इसी प्रकार अचानक आई थी, परंतु वह तब तक अपनी शैशवावस्था भी पार नहीं कर सकी थी। सुनहरे रंग के रेशमी लच्छों की गाँठ के समान उसका कोमल लघु शरीर था। छोटा-सा मुँह और बड़ी-बड़ी पानीदार आँखें। देखती थीं, तो लगता था कि अभी छलक पड़ेंगी। लंबे कान, पतली सुडौल टाँगें, जिन्हें देखते ही उनमें प्रसुप्त गति की बिजली की लहर देखने वालों की आँखों में कौंध जाती थी। सब उसके सरल शिशु रूप से इतने प्रभावित हुए कि किसी चंपकवर्णा रूपसी के उपयुक्त सोना, सुवर्णा, स्वर्णलेखा आदि नाम उसका परिचय बन गए।

मनुष्य मृत्यु को असुंदर ही नहीं, अपवित्र भी मानता है। उसके प्रियतम आत्मीय जन का शव भी उसके निकट अपवित्र, अस्पृश्य तथा भयजनक हो उठता है। जब मृत्यु इतनी अपवित्र और असुंदर है, तब उसे बाँटते घूमना क्यों अपवित्र और असुंदर कार्य नहीं है, यह मैं समझ नहीं पाती।

आकाश में रंग-बिरंगे फूलों की छटाओं के समान उड़ते हुए और वीणा, वंशी मुरज, जलतरंग आदि का वृंदवादन बजाते हुए पक्षी कितने सुंदर जान पड़ते हैं। मनुष्य ने बंदूक उठाई, निशाना साधा और गोली चला दी जिससे कई गाते-उड़ते पक्षी

© NCERT WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

ढेले के समान धरती पर आ गिरे। किसी की लाल-पीली चोंच वाली गर्दन टूट गई है, किसी के पीले सुंदर पंजे टेढ़े हो गए हैं और किसी के इन्द्रधनुषी पंख बिखर गए हैं। क्षत-विक्षत रक्तस्नात उन मृत-अर्धमृत लघु गातों में न अब संगीत है, न सौंदर्य, परंतु तब भी मारनेवाला अपनी सफलता पर नाच उठता है।

पक्षीजगत में ही नहीं, पशुजगत में भी मनुष्य की ध्वंसलीला ऐसी ही निष्ठुर है। पशुजगत में हिरन जैसा निरीह और सुंदर दूसरा पशु नहीं है। उसकी आँखें तो मानो करुणा की चित्रलिपि हैं, परंतु इसका भी गतिमय सजीव सौंदर्य मनुष्य का मनोरंजन करने में असमर्थ है। मानव को, जो जीवन का श्रेष्ठतम रूप है, जीवन के अन्य रूपों के प्रति इतनी वितृष्णा, विरक्ति और मृत्यु के प्रति इतना मोह और इतना आकर्षण क्यों?

बेचारी सोना भी मनुष्य की इसी निष्ठुर मनोरंजनप्रियता के कारण अपने अरण्य परिवेश और स्वजाति से दूर मानव-समाज में आ पड़ी थी।

प्रशांत वनस्थली में जब मृग-समूह शिकारियों की आहट से चौंककर भागा, तब सोना की माँ ने अपनी संतान को अपने शरीर की ओट में सुरक्षित रखने के प्रयास में प्राण गँवा दिए।

पता नहीं दया के कारण या कौतुकप्रियता के कारण शिकारी मृत हिरनी के साथ चिपके हुए शावक को जीवित उठा लाए। उनमें से किसी के परिवार की सदस्य गृहिणी और बच्चों ने उसे पानी मिला दूध पिला-पिलाकर दो-चार दिन जीवित रखा।

सुस्मिता वसु के समान ही किसी बालिका को मेरा स्मरण हो आया और वह उस अनाथ शावक को मुमूर्षु अवस्था में मेरे पास ले आई। शावक अवांछित तो था ही, उसके बचने की आशा भी धूमिल थी, परंतु मैंने उसे स्वीकार कर लिया। स्निग्ध सुनहले रंग के कारण सब उसे सोना कहने लगे। दूध पिलाने की शीशी, ग्लूकोज, बकरी का दूध आदि सब कुछ एकत्र करके, उसे पालने का कठिन अनुष्ठान आरंभ हुआ।

उसका मुख इतना छोटा था कि उसमें शीशी का निप्पल समाता ही नहीं था, उस पर उसे पीना भी नहीं आता था। फिर धीरे-धीरे उसे पीना ही नहीं, दूध की बोतल पहचानना भी आ गया। आँगन में कूदते-फाँदते हुए भी भक्तिन को बोतल साफ करते देखकर वह दौड़ आती और अपनी तरल-चकित आँखों से उसे ऐसे देखने लगती, मानो वह कोई सजीव मित्र हो।

उसने रात में मेरे पलंग के पाए से सटकर बैठना सीख लिया था, पर वहाँ गंदा न करने की आदत कुछ दिनों के अभ्यास से पड़ सकी। अँधेरा होते ही वह मेरे पलंग के पास आ बैठती और फिर सवेरा होने पर ही बाहर निकलती।

© JSTBPC WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

उसका दिनभर का कार्यकलाप भी एक प्रकार से निश्चित था। विद्यालय और छात्रवास के विद्यार्थियों के निकट पहले वह कौतुक का कारण रही, परंतु कुछ दिन बीत जाने पर वह उनकी ऐसी प्रिय साथिन बन गई, जिसके बिना उनका किसी काम में मन ही नहीं लगता था।

दूध पीकर और भीगे चने खाकर सोना कुछ देर कंपाउंड में चारों पैरों को संतुलित कर चौकड़ी भरती, फिर वह छात्रावास पहुँचती और प्रत्येक कमरे का भीतर-बाहर निरीक्षण करती।

मेस में उसके पहुँचते ही छात्राएँ ही नहीं, नौकर-चाकर तक दौड़े आते और सभी उसे कुछ-न-कुछ खिलाने को उतावले रहते, परंतु उसे बिस्कुट को छोड़कर अन्य खाद्य-पदार्थ कम पसंद थे।

छात्रावास का जागरण और जलपान अध्याय समाप्त होने पर वह घास के मैदान में कभी दूब चरती और कभी उस पर लोटती रहती। मेरे भोजन के समय को वह किस प्रकार जान लेती थी, यह समझाने का उपाय नहीं है, परंतु वह ठीक उसी समय भीतर आ जाती और तब तक मुझसे सटी खड़ी रहती जब तक मेरा खाना समाप्त न हो जाता। कुछ चावल, रोटी आदि उसको भी प्राप्य था, परंतु उसे कच्ची सब्जी ही भाती थी।

घंटी बजते ही वह फिर प्रार्थना के मैदान में पहुँच जाती और उसके समाप्त होने पर छात्रावास के समान ही कक्षाओं के भीतर-बाहर चक्कर लगाना आरंभ करती।

उसे छोटे बच्चे अधिक प्रिय थे, क्योंकि उनके साथ खेलने का अधिक अवकाश रहता था। वे पंक्तिबद्ध खड़े होकर सोना-सोना पुकारते और वह उनके ऊपर से छलाँग लगाकर एक ओर से दूसरी ओर कूदती रहती। यह सरकस जैसा खेल कभी घंटों चलता, क्योंकि खेल के घंटों में बच्चों की एक कक्षा के उपरांत दूसरी आती रहती।

मेरे प्रति स्नेह-प्रदर्शन के कई प्रकार थे। बाहर खड़े होने पर वह सामने या पीछे से छलाँग लगाती और मेरे सिर के ऊपर से दूसरी ओर निकल जाती। प्राय: देखने वालों को भय होता था कि उसके पैरों से मेरे सिर पर चोट न लग जाए, परंतु वह पैरों को इस प्रकार सिकोड़े रहती और मेरे सिर को इतनी ऊँचाई से लाँघती थी कि चोट लगने की कोई संभावना ही नहीं रहती थी।

भीतर आने पर वह मेरे पैरों से अपना शरीर रगड़ने लगती। मेरे बैठे रहने पर वह साड़ी का छोर

© NCERT not to be republished

मुँह में भर लेती और कभी पीछे चुपचाप खड़े होकर चोटी ही चबा डालती। डाँटने पर वह अपनी बड़ी, गोल और चकित आँखों से ऐसे अनिर्वचनीय जिज्ञासा भरकर एकटक देखने लगती कि हँसी आ जाती।

पशु, मनुष्य के निश्छल स्नेह से परिचित रहते हैं, उसकी ऊँची-नीची सामाजिक स्थितियों से नहीं, यह सत्य मुझे सोना से अनायास प्राप्त हो गया।

अनेक विद्यार्थियों की भारी-भरकम गुरु जी से सोना को क्या लेना-देना था। वह तो उस दृष्टि को पहचानती थी, जिसमें उसके लिए स्नेह छलकता था और उन हाथों को जानती थी, जिन्होंने बलपूर्वक दूध की बोतल उसके मुख से लगाई थी।

यदि सोना को अपने स्नेह की अभिव्यक्ति के लिए मेरे सिर के ऊपर कूदना आवश्यक लगेगा, तो वह कूदेगी ही। मेरी किसी अन्य परिस्थिति से प्रभावित होना, उसके लिए संभव ही नहीं था।

कुत्ता, स्वामी और सेवक का अंतर जानता है और स्वामी के स्नेह या क्रोध की प्रत्येक मुद्रा से परिचित रहता है। स्नेह से बुलाने पर वह गद्गद् होकर निकट आ जाता है और क्रोध करते ही सभीत और दयनीय बनकर दुबक जाता है, पर हिरन यह अंतर नहीं जानता, अत: उसका पालने वाले से डरना कठिन है। यदि उस पर क्रोध किया जाए तो वह अपनी चकित आँखों में और अधिक विस्मय भरकर पालने वाले की दृष्टि से दृष्टि मिलाकर खड़ा रहेगा-मानो पूछता हो, क्या यह उचित है। वह केवल स्नेह पहचानता है, जिसकी स्वीकृति जताने के लिए उसकी विशेष चेष्टाएँ हैं।

WEBCOPY NOT TO BE REPUBLISHED ©BSTBPC

वर्षभर का समय बीत जाने पर सोना, हिरन-शावक से हिरनी में परिवर्तित होने लगी। उसके शरीर के पीताभ रोएँ ताम्रवर्णी झलक देने लगे। टाँगें अधिक सुडौल और खुरों के कालेपन में चमक आ गई। ग्रीवा अधिक बंकिम और लचीली हो गई। पीठ में भराव वाला उतार-चढ़ाव और स्निग्धता दिखाई देने लगी, परंतु सबसे अधिक विशेषता तो उसकी आँखों और दृष्टि में मिलती थी। आँखों के चारों ओर खिंची कज्जलकोर में नीले गोलक और दृष्टि ऐसी लगती थी, मानो नीलम के बल्बों में उजली विद्युत का स्फुरण हो।

इसी बीच फ्लोरा ने भक्तिन की कुछ अँधेरी कोठरी के एकांत कोने में चार बच्चों को जन्म दिया और वह खेल के संगियों को भूलकर अपनी नवीन सृष्टि के संरक्षण में व्यस्त हो

स्वाभाविक चकित दृष्टि गंभीर विस्मय से भर गई।

एक दिन देखा फ्लोरा कहीं बाहर घूमने गई है और सोना भक्तिन की कोठरी में निश्चिंत लेटी है। आश्चर्य की बात यह थी कि फ्लोरा हेमंत, वसंत या गोधूली को तो अपने बच्चों के पास फटकने भी नहीं देती थी, परंतु सोना के संरक्षण में उन्हें छोड़कर आश्वस्त-भाव से इधर-उधर घूमने चली जाती थी।

संभवत: वह सोना की स्नेही और अहिंसक प्रवृति से परिचित हो गई थी। पिल्लों के बड़े होने पर और उनकी आँखें खुलजाने पर सोना ने उन्हें भी अपने पीछे घूमने वाली सेना में सम्मिलित कर लिया और मानो इस वृद्धि के उपलक्ष्य में आनंदोत्सव मनाने के लिए अधिक देर तक मेरे सिर के आर-पार चौकड़ी भरती रही, पर कुछ दिनों के उपरांत जब यह आनंदोत्सव पुराना पड़ गया, तब उसकी शब्दहीन, संज्ञाहीन प्रतीक्षा की स्तब्ध घड़ियाँ लौट आईं।

उसी वर्ष गर्मियों में मेरा बद्रीनाथ की यात्रा का कार्यक्रम बना। प्राय: मैं अपने पालतू जीवों के कारण प्रवास में कम रहती हूँ। उनकी देखरेख के लिए सेवक रहने पर भी मैं उन्हें छोड़कर आश्वस्त नहीं हो पाती। भक्तिन, अनुरूप आदि तो साथ जाने वाले थे ही, पालतू जीवों में से मैंने फ्लोरा को साथ ले जाने का निश्चय किया, क्योंकि वह मेरे बिना रह नहीं सकती थी।

छात्रावास बंद था, अत: सोना के नित्य नैमित्तिक कार्यकलाप भी बंद हो चुके थे। मेरी उपस्थिति का भी अभाव था, अत: आनंदोल्लास के लिए भी अवकाश कम था। हेमंत, वसंत मेरी यात्रा और तज्जनित अनुपस्थिति से परिचित हो चुके थे। होल्डाल बिछाकर उसे बिस्तर पर रखते ही वे दौड़कर उस पर लेट जाते और भौंकने तथा क्रंदन की ध्वनियों से सम्मिलित स्वर में मुझे मानो उपालंभ देने लगते। यदि उन्हें बाँधकर न रखा जाता तो वे कार में घुसकर बैठ जाते या उसके पीछे-पीछे दौड़कर स्टेशन तक जा पहुँचते, परंतु जब मैं चली जाती तब वे उदास-भाव से मेरे लौटने की प्रतीक्षा करने लगते।

सोना की सहज चेतना में न मेरी यात्रा जैसी स्थिति का बोध था, न प्रत्यावर्तन का, इसी से उसकी निराशा, जिज्ञासा और विस्मय का अनुमान मेरे लिए सहज था।

पैदल जाने-आने के निश्चय के कारण बद्रीनाथ की यात्रा में ग्रीष्मावकाश समाप्त हो गया। 2 जुलाई को लौटकर जब में बँगले के द्वार पर आ खड़ी हुई, तब बिछुड़े हुए पालतू जीवों में कोलाहल होने लगा।

गोधूली कूदकर मेरे कंधे पर आ बैठी, हेमंत-वसंत मेरे चारों ओर परिक्रमा करके हर्ष की ध्वनियों से मेरा स्वागत करने लगे, पर मेरी दृष्टि सोना को खोजने लगी। क्यों वह अपना उल्लास व्यक्त करने के लिए मेरे सिर के ऊपर से छलाँग नहीं लगाती? सोना कहाँ है, पूछने पर माली आँखें पोंछने लगा और चपरासी, चौकीदार एक-दूसरे के मुख देखने लगे। वे लोग आने के साथ ही मुझे कोई दुखद समाचार नहीं देना चाहते थे, परंतु माली की भावुकता ने बिना बोले ही उसे दे डाला।

© BSTBPC
WEBCOPY NOT TO BE PUBLISHED

ज्ञात हुआ कि छात्रावास के सन्नाटे और फ्लोरा के तथा मेरे अभाव के कारण सोना इतनी अस्थिर हो गई थी कि इधर-उधर कुछ खोजती-सी वह प्राय: कंपाउंड से बाहर निकल जाती थी। इतनी बड़ी हिरनी को पालने वाले तो कम थे, परंतु उसे खाद्य और स्वाद प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्तियों का बाहुल्य था। इसी आशंका से माली ने उसे मैदान में एक लंबी रस्सी से बाँधना आरंभ कर दिया था।

एक दिन न जाने किस स्तब्धता की स्थिति में बंधन-सीमा भूलकर वह बहुत ऊँचाई तक उछली और रस्सी के कारण मुख के बल धरती पर आ गिरी। वही उसकी अंतिम साँस और अंतिम उछाल थी।

सब उस सुनहले रेशम की गठरी से शरीर को गंगा में प्रवाहित कर आए और इस प्रकार किसी निर्जन वन में जन्मी और जन-संकुलता में पली सोना की करुण-कथा का अंत हुआ।

सब सुनकर मैंने निश्चय किया था कि अब हिरन नहीं पालूँगी, पर संयोग से फिर भी हिरन पालना पड़ रहा है।

–महादेवी वर्मा

©DSTBPC WEBCOPY, NOT TO BE PUBLISHED

शब्दार्थ

गत वर्ष – पिछला साल	**चंपकवर्णं रूपसी** – चंपा के फूल जैसे रंग वाली सुदंरी
अस्पृश्य – जो छूने योग्य न होना	**भयजनक** – डर उत्पन्न करने वाला
रक्तस्नात – खून से भींगा	**ध्वंसलीला** – नष्ट करने की क्रिया
निष्ठुर – कठोर	**प्रशांत** – शांत, पूरी तरह से शांत
अरण्य – जंगल	**कौतुकप्रियता** – खेल-तमाशा या हँसी-मजाक का भाव
मुमूर्षु अवस्था – मरण की अवस्था	**अवांछित** –जिसकी इच्छा न की गई हो
स्निग्ध – चिकना, सुंदर	**अनुष्ठान** – विशिष्ट क्रिया, पूजा-पाठ
हिरन-शावक – हिरन का शिशु	**पीताभ** – पीली चमक देता हुआ
कज्जलकोर – काजल की रेखा	**स्फुरण** – हरकत
नित्य-नैमित्तिक –रोज के काम	**तज्जनित** – उससे उत्पन्न
उपालंभ – शिकायत	**प्रत्यावर्तन** –पलट के आना
स्तब्धता – जड़ता, निश्चेष्टता	**जन-संकुलता** – लोगों की भीड़-भाड़
बंकिम – टेढ़ा, तिरछा	**सभीत** – भय के साथ
ग्रीवा – गरदन, गला	**वृंदवादन** – सामूहिक रूप से वाद्य यंत्रों को बजाना